नवाँ अध्याय

श्रीपराशर उवाच

तारामयं भगवतः शिशुमाराकृति प्रभोः। दिवि रूपं हरेर्यत्तु तस्य पुच्छे स्थितो ध्रुवः ॥१॥
सैष भ्रमन् भ्रामयति चन्द्रादित्यादिकान् ग्रहान्। भ्रमन्तमनु तं यान्ति नक्षत्राणि च चक्रवत् ॥२॥
सूर्याचन्द्रमसौ तारा नक्षत्राणि ग्रहैः सह। वातानीकमयैर्बन्धैर्ध्रुवे बद्धानि तानि वै ॥३॥
शिशुमाराकृति प्रोक्तं यद्रूपं ज्योतिषां दिवि। नारायणोऽयनं धाम्नां तस्याधारः स्वयं हृदि ॥४॥
उत्तानपादपुत्रस्तु तमाराध्य जगत्पतिम्। स ताराशिशुमारस्य ध्रुवः पुच्छे व्यवस्थितः ॥५॥
आधारः शिशुमारस्य सर्वाध्यक्षो जनार्दनः। ध्रुवस्य शिशुमारस्तु ध्रुवे भानुर्व्यवस्थितः ॥६॥
तदाधारं जगच्चेदं सदेवासुरमानुषम् ॥७॥
येन विप्र विधानेन तन्ममैकमनाः शृणु। विवस्वानष्टभिर्मासैरादायापो रसात्मिकाः।
वर्षत्यम्बु ततश्चान्नमन्नादप्यखिलं जगत् ॥८॥
विवस्वानंशुभिस्तीक्ष्णैरादाय जगतो जलम्। सोमं पुष्णात्यथेन्दुश्च वायुनाडीमयैर्दिवि।
नालैर्विक्षिपतेऽभ्रेषु धूमाग्न्यनिलमूर्तिषु ॥९॥
न भ्रश्यन्ति यतस्तेभ्यो जलान्यभ्राणि तान्यतः। अभ्रस्थाः प्रपतन्त्यापो वायुना समुदीरिताः।
संस्कारं कालजनितं मैत्रेयासाद्य निर्मलाः ॥१०॥
सरित्समुद्रभौमास्तु तथापः प्राणिसम्भवाः। चतुष्प्रकारा भगवानादत्ते सविता मुने ॥११॥
आकाशगङ्गासलिलं तथादाय गभस्तिमान्। अनभ्रगतमेवोर्व्यां सद्यः क्षिपति रश्मिभिः ॥१२॥

ज्योतिश्चक्र और शिशुमार चक्र का वर्णन

श्रीपराशर महर्षि ने कहा— भगवान् श्रीहरि का जो तारामय शिशुमार (घड़ियाल) के आकार का जो आकाश में रूप है उसके पुच्छ भाग में ध्रुव स्थित हैं ॥१॥ वे ध्रुव ही घूमते हुए चन्द्रमा आदि ग्रहों को घुमाते रहते हैं। घूमते हुए ध्रुव का अनुगमन नक्षत्र गण चक्र के समान करते रहते हैं ॥२॥ सूर्य, चन्द्रमा, तारे, नक्षत्र ये सभी ग्रहों के साथ वायुमण्डलमय बन्धन से ध्रुव से बन्धे हुए हैं ॥३॥ मैंने तुम्हें जो आकाश में शिशुमार का आकार बतलाया है, उसके आधार स्वरूप तथा उसके हृदय में स्वयं भगवान् नारायण स्थित हैं ॥४॥ उत्तानपाद का पुत्र ध्रुव जगत् के स्वामी श्रीभगवान् की आराधना करके उस शिशुमाराकृति श्रीभगवान् के पुच्छ भाग में स्थित हैं ॥५॥ शिशुमार के आधार भगवान् जनार्दन हैं, ध्रुव के आधार शिशुमार हैं। और सूर्य के आधार ध्रुव हैं। देवताओं, असुर तथा मनुष्यों सहित जगत् के आधार सूर्य है। यह सब जिस प्रकार से है, हे विप्र ! वह सावधान होकर सुनो। सूर्य आठ महीनों तक रसमय जलों को लेकर जल की वर्षा करते हैं, उससे अन्न पैदा होता है, और अन्न से ही सम्पूर्ण जगत् का पालन होता है ॥७-८॥ सूर्य अपने तीव्र किरणों से जल का शोषण करके चन्द्रमा का पोषण करते हैं। चन्द्रमा अपने वायुमय नाडीमय नालियों से संसार के जल को लेकर आकाश में धूम अग्नि और वायुमय मेघों में डाल देते हैं ॥९॥ चन्द्रमा से प्राप्त होने वाला जल मेघों से तुरंत नहीं गिरता है, इसीलिए मेघों को अभ्र कहते हैं। वायु के द्वारा प्रेरित मेघ में स्थित जल समयानुसार स्वच्छ होकर गिरते हैं ॥१०॥ हे मुने ! नदी, समुद्र, पृथिवी तथा जीवों से उत्पन्न होने वाले चारो प्रकार के जलों को सूर्य भगवान् गृहीत करते हैं ॥११॥ आकाश गङ्गा के जल को लेकर सूर्य विना मेघ के पृथिवी पर शीघ्र ही अपनी किरणों से बरसा देते हैं। हे द्विजोत्तम ! उस जल के संस्पर्श मात्र से जीव के सारे

तस्य संस्पर्शनिर्धूतपापपङ्को द्विजोत्तम। न याति नरकं मर्त्यो दिव्यं स्नानं हि तत्स्मृतम् ॥१३॥
दृष्टसूर्यं हि यद्वारि पतत्यभ्रैर्विना दिवः। आकाशगङ्गासलिलं तद्‌गोभिः क्षिप्यते रवेः ॥१४॥
कृत्तिकादिषु ऋक्षेषु विषमेषु च यद्दिवः। दृष्टार्कपतितं ज्ञेयं तद्गाङ्गं दिग्गजोज्झितम् ॥१५॥
युग्मेर्क्षेषु च यत्तोयं पतत्यर्कोज्झितं दिवः। तत्सूर्यरश्मिभिः सर्वं समादाय निरस्यते ॥१६॥
उभयं पुण्यमत्यर्थं नृणां पापभयापहम्। आकाशगङ्गासलिलं दिव्यं स्नानं महामुने ॥१७॥
यत्तु मेघैः समुत्सृष्टं वारि तत्प्राणिनां द्विज। पुष्णात्योषधयः सर्वा जीवनायामृतं हि तत् ॥१८॥
तेन वृद्धिं परां नीतः सकलश्चौषधीगणः। साधकः फलपाकान्तः प्रजानां द्विज जायते ॥१९॥
तेन यज्ञान्यथाप्रोक्तान्मानवाः शास्त्रचक्षुषः। कुर्वन्त्यहरहस्तैश्च देवानाप्याययन्ति ते ॥२०॥
एवं यज्ञाश्च वेदाश्च वर्णाश्च वृष्टिपूर्वकाः। सर्वे देवनिकायाश्च सर्वे भूतगणाश्च ये ॥२१॥
वृष्ट्या धृतमिदं सर्वमन्नं निष्पाद्यते यया। सापि निष्पाद्यते वृष्टिः सवित्रा मुनिसत्तम ॥२२॥
आधारभूतः सवितुर्ध्रुवो मुनिवरोत्तम। ध्रुवस्य शिशुमारोऽसौ सोऽपि नारायणात्मकः ॥२३॥
हृदि नारायणस्तस्य शिशुमारस्य संस्थितः। बिभर्ता सर्वभूतानामादिभूतः सनातनः ॥२४॥

इति श्रीविष्णुमहापुराणे द्वितीयेंऽशे नवमोऽध्यायः ॥९॥

पाप विनष्ट हो जाते हैं और वे नरक में नहीं जाते हैं। वह दिव्य स्नान कहलाता है ॥१२-१३॥ सूर्यदेव के दिखते रहने पर बिना बादल के ही जो आकाश से जल गिरता है, वह आकाशगङ्गा का जल होता है, उसे सूर्यदेव अपनी किरणों से बरसाते हैं ॥१४॥ कृत्तिका आदि विषम नक्षत्रों में सूर्य के दिखते रहने पर भी जो आकाश से जल गिरता है, उसे दिग्गजों द्वारा बरसाया हुआ आकाश गङ्गा का जल समझना चाहिए ॥१५॥ हे मुने ! रोहिणी आर्द्रा आदि सम नक्षत्रों में जो सूर्य के दिखते रहने पर जल बरसता है, उसे सूर्य के द्वारा बरसाया हुआ आकाश गङ्गा का जल समझना चाहिए ॥१६॥ ये दोनों प्रकार के जल अत्यन्त पवित्र होते हैं, मनुष्यों के पाप तथा भय को विनष्ट करने वाले होते हैं। हे महामुने ! आकाशगङ्गा के जल से किया हुआ स्नान दिव्य स्नान होता है ॥१७॥ हे द्विज ! जो मेघों द्वारा जल बरसाया जाता है वह मनुष्यों के जीवन के लिए अमृत स्वरूप होता है और औषिधियों का पोषण करता है ॥१८॥ उस वर्षा के जल से परम वृद्धि को प्राप्त ओषधिगण, जो फल के पकने पर सुख जाते है ऐसे गेहूँ, धान आदि मनुष्य के पोषण के साधक होते हैं ॥१९॥ शास्त्रज्ञ पुरुष उन ओषधियों द्वारा शास्त्रोक्त पद्धति से यज्ञ करते हैं, वे देवताओं को पुष्ट करते हैं ॥२०॥ इस तरह यज्ञ, वेद, वर्ण, देवसमूह तथा भूतगण (जीवगण) सबके सब वृष्टि के आश्रित हैं ॥२१॥ जिस वृष्टि के द्वारा अन्न उत्पन्न होते हैं, वह वृष्टि सम्पूर्ण जगत् का आधार है। और उस वृष्टि को सूर्य करते हैं ॥२२॥ हे मुनिश्वरों में श्रेष्ठ ! सूर्यदेव के भी आधार ध्रुव हैं। ध्रुव के आधार शिशुमार हैं और शिशुमार के आधार भगवान् नारायण हैं ॥२३॥ उस शिशुमार के हृदय प्रदेश में नारायण स्थित हैं। वे ही सभी भूतों के पालक आदि भूत और सनातन हैं ॥२४॥

इस तरह श्रीविष्णुमहापुराण के दूसरे अंश के नवें अध्याय का शिवप्रसाद द्विवेदी (श्रीधराचार्य) कृत हिन्दी अनुवाद सम्पूर्ण हुआ ॥९॥